नमो नमो निम्मलदंसणस्स

बाल ब्रह्मचारी श्री नेमिनाथाय नम:

पूज्य आनन्द-क्षमा-ललित-सुशील-सुधर्मसागर-गुरूभ्यो नम:

आगम-३६

व्यवहार

आगमसूत्र हिन्दी अनुवाद

अनुवादक एवं सम्पादक

आगम दीवाकर मुनि दीपरत्नसागरजी

[M.Com. M.Ed. Ph.D. श्रुत महर्षि]

'आगम' हिन्दी-अनुवाद-श्रेणी पुष्प-३६

आगमसूत्र-३६- 'व्यवहार'

छेदसूत्र-३- हिन्दी अनुवाद

कहां क्या देखे ?

क्रम	विषय	पृष्ठ	क्रम	विषय	पृष्ठ
१	परिहार स्थान, प्रायश्चित्त विधि आदि	०५	६	भिक्षा-अतिशय, साधु-साध्वी स्थान	१७
२	दो या अधिक साधु सहचरण विधि	०८	७	साधु-साध्वी कल्प्य-अकल्प्य विधि	१९
३	दीक्षापर्याय तथा शास्त्र अनुज्ञ आदि	१०	८	शय्या संस्तारक पात्रविधि आदि	२१
४	ऋतुकाल संबंधी विधि-निषेध	१२	९	गौचरी बैठना प्रवेशना आदि विधि	२३
५	ऋतुकाल संबंधी विधि-निषेध	१५	१०	प्रतिमा वर्णन	२५

४५ आगम वर्गीकरण

क्रम	आगम का नाम	सूत्र		क्रम	आगम का नाम	सूत्र
०१	आचार	अंगसूत्र-१		२५	आतुरप्रत्याख्यान	पयन्नासूत्र-२
०२	सूत्रकृत्	अंगसूत्र-२		२६	महाप्रत्याख्यान	पयन्नासूत्र-३
०३	स्थान	अंगसूत्र-३		२७	भक्तपरिज्ञा	पयन्नासूत्र-४
०४	समवाय	अंगसूत्र-४		२८	तंदुलवैचारिक	पयन्नासूत्र-५
०५	भगवती	अंगसूत्र-५		२९	संस्तारक	पयन्नासूत्र-६
०६	ज्ञाताधर्मकथा	अंगसूत्र-६		३०.१	गच्छाचार	पयन्नासूत्र-७
०७	उपासकदशा	अंगसूत्र-७		३०.२	चन्द्रवेध्यक	पयन्नासूत्र-७
०८	अंतकृत् दशा	अंगसूत्र-८		३१	गणिविद्या	पयन्नासूत्र-८
०९	अनुत्तरोपपातिकदशा	अंगसूत्र-९		३२	देवेन्द्रस्तव	पयन्नासूत्र-९
१०	प्रश्नव्याकरणदशा	अंगसूत्र-१०		३३	वीरस्तव	पयन्नासूत्र-१०
११	विपाकश्रुत	अंगसूत्र-११		३४	निशीथ	छेदसूत्र-१
१२	औपपातिक	उपांगसूत्र-१		३५	बृहत्कल्प	छेदसूत्र-२
१३	राजप्रश्निय	उपांगसूत्र-२		३६	व्यवहार	छेदसूत्र-३
१४	जीवाजीवाभिगम	उपांगसूत्र-३		३७	दशाश्रुतस्कन्ध	छेदसूत्र-४
१५	प्रज्ञापना	उपांगसूत्र-४		३८	जीतकल्प	छेदसूत्र-५
१६	सूर्यप्रज्ञप्ति	उपांगसूत्र-५		३९	महानिशीथ	छेदसूत्र-६
१७	चन्द्रप्रज्ञप्ति	उपांगसूत्र-६		४०	आवश्यक	मूलसूत्र-१
१८	जंबूद्वीपप्रज्ञप्ति	उपांगसूत्र-७		४१.१	ओघनिर्युक्ति	मूलसूत्र-२
१९	निरयावलिका	उपांगसूत्र-८		४१.२	पिंडनिर्युक्ति	मूलसूत्र-२
२०	कल्पवतंसिका	उपांगसूत्र-९		४२	दशवैकालिक	मूलसूत्र-३
२१	पुष्पिका	उपांगसूत्र-१०		४३	उत्तराध्ययन	मूलसूत्र-४
२२	पुष्पचूलिका	उपांगसूत्र-११		४४	नन्दी	चूलिकासूत्र-१
२३	वृष्णिदशा	उपांगसूत्र-१२		४५	अनुयोगद्वार	चूलिकासूत्र-२
२४	चतु:शरण	पयन्नासूत्र-१		---	----------	-----

मुनि दीपरत्नसागरजी प्रकाशित साहित्य

आगम साहित्य			आगम साहित्य		
क्र	साहित्य नाम	बुक्स	क्रम	साहित्य नाम	बुक्स
1	मूल आगम साहित्य:-	147	6	आगम अन्य साहित्य:-	10
	-1- आगमसुत्ताणि-मूलं print	[49]		-1- આગમ કથાનુયોગ	06
	-2- आगमसुत्ताणि-मूलं Net	[45]		-2- आगम संबंधी साहित्य	02
	-3- आगममञ्जूषा (मूल प्रत)	[53]		-3- ऋषिभाषित सूत्राणि	01
2	आगम अनुवाद साहित्य:-	165		-4- आगमिय सूक्तावली	01
	-1- આગમસૂત્ર ગુજરાતી અનુવાદ	[47]		आगम साहित्य- कुल पुस्तक	516
	-2- आगमसूत्र हिन्दी अनुवाद Net	[47]			
	-3- AagamSootra English Trans.	[11]			
	-4- આગમસૂત્ર સટીક ગુજરાતી અનુવાદ	[48]			
	-5- आगमसूत्र हिन्दी अनुवाद print	[12]		अन्य साहित्य:-	
3	आगम विवेचन साहित्य:-	171	1	તત્ત્વાભ્યાસ સાહિત્ય-	13
	-1- आगमसूत्र सटीकं	[46]	2	સૂત્રાભ્યાસ સાહિત્ય-	06
	-2- आगमसूत्राणि सटीकं प्रताकार-1	[51]	3	વ્યાકરણ સાહિત્ય-	05
	-3- आगमसूत्राणि सटीकं प्रताकार-2	[09]	4	વ્યાખ્યાન સાહિત્ય-	04
	-4- आगम चूर्णि साहित्य	[09]	5	જિનભક્તિ સાહિત્ય-	09
	-5- सवृत्तिक आगमसूत्राणि-1	[40]	6	વિધિ સાહિત્ય-	04
	-6- सवृत्तिक आगमसूत्राणि-2	[08]	7	આરાધના સાહિત્ય	03
	-7- सचूर्णिक आगमसुत्ताणि	[08]	8	પરિચય સાહિત્ય-	04
4	आगम कोष साहित्य:-	14	9	પૂજન સાહિત્ય-	02
	-1- आगम सद्दकोसो	[04]	10	તીર્થંકર સંક્ષિપ્ત દર્શન	25
	-2- आगम कहाकोसो	[01]	11	પ્રકીર્ણ સાહિત્ય-	05
	-3- आगम-सागर-कोष:	[05]	12	દીપરત્નસાગરના લઘુશોધનિબંધ	05
	-4- आगम-शब्दादि-संग्रह (प्रा-सं-गु)	[04]		આગમ સિવાયનું સાહિત્ય કુલ પુસ્તક	85
5	आगम अनुक्रम साहित्य:-	09			
	-1- આગમ વિષયાનુક્રમ- (મૂળ)	02		1-आगम साहित्य (कुल पुस्तक)	516
	-2- आगम विषयानुक्रम (सटीकं)	04		2-आगमेतर साहित्य (कुल	085
	-3- आगम सूत्र-गाथा अनुक्रम	03		दीपरत्नसागरजी के कुल प्रकाशन	601

મુનિ દીપરત્નસાગરનું સાહિત્ય

1	મુનિ દીપરત્નસાગરનું આગમ સાહિત્ય	[કુલ પુસ્તક 516]	તેના કુલ પાના [98,300]
2	મુનિ દીપરત્નસાગરનું અન્ય સાહિત્ય	[કુલ પુસ્તક 85]	તેના કુલ પાના [09,270]
3	મુનિ દીપરત્નસાગર સંકલિત 'તત્ત્વાર્થસૂત્ર'ની વિશિષ્ટ DVD		તેના કુલ પાના [27,930]

અમારા પ્રકાશનો કુલ ૬૦૧ + વિશિષ્ટ DVD કુલ પાના 1,35,500

[३६] व्यवहार
छेदसूत्र-३- हिन्दी अनुवाद

उद्देशक-१

सूत्र - १

जो साधु-साध्वी एक मास का प्रायश्चित्त स्थान अंगीकार करके, सेवन करके, आलोचन करके तब यदि माया रहित आलोचना करे तो एक मास का प्रायश्चित्त ।

सूत्र – २-५

यदि साधु-साध्वी दो, तीन, चार या पाँच मास का प्रायश्चित्त स्थानक सेवन करके कपट रहित आलोवे तो उतने ही मास का प्रायश्चित्त दे, यदि कपट सहित आलोवे तो हर एक में एक-एक मास का ज्यादा प्रायश्चित्त यानि तीन, चार, पाँच, छ मास का प्रायश्चित्त । पाँच मास से ज्यादा प्रायश्चित्त स्थानक सेवन करनेवाले को माया रहित या माया सहित सेवन करे तो भी छ मास का ही प्रायश्चित्त, क्योंकि छ मास के ऊपर प्रायश्चित्त नहीं है ।

सूत्र – ६-१०

जो साधु-साध्वी बार-बार दोष सेवन करके एक, दो, तीन, चार या पाँच मास का प्रायश्चित्त स्थानक सेवन करके आलोचना करते हुए माया सहित आलोवे तो उतने ही मास का प्रायश्चित्त आता है, मायापूर्वक आलोवे तो एक-एक अधीक मास का प्रायश्चित्त आए यानि एक मासवाले को दो मास, दो मासवाले को तीन मास, यावत् पाँच मासवाले को छ मास प्रायश्चित्त ।

पाँच मास से ज्यादा समय का प्रायश्चित्त स्थान सेवन करके कपट सहित या रहित आलोचना करे तो भी छ मास का प्रायश्चित्त आता है क्योंकि छ मास से ज्यादा प्रायश्चित्त नहीं है । जिस तीर्थंकर के शासन में जितना उत्कृष्ट तप हो उससे ज्यादा प्रायश्चित्त नहीं आता ।

सूत्र – ११-१२

जो साधु-साध्वी एक बार दोष सेवन करके या ज्यादा बार दोष सेवन करके एक, दो, तीन, चार या पाँच मास का उतने पूर्वोक्त प्रायश्चित्त स्थानक में से अन्य किसी भी प्रायश्चित्त स्थान सेवन करके यदि माया रहित आलोचना करे तो उसे उतने ही मास का प्रायश्चित्त आता है और मायापूर्वक आलोचना करे तो एक मास अधीक यानि दो, तीन, चार, पाँच, छ मास का प्रायश्चित्त आता है ।

पाँच मास से अधीक ''पाप सेवन'' करनेवाले को माया रहित या सहित आलोवे तो भी छ मास का ही प्रायश्चित्त आता है ।

सूत्र – १३-१४

जो साधु-साध्वी एक बार या बार-बार चार मास का या उससे ज्यादा, पाँच मास का या उससे ज्यादा पहले कहने के मुताबिक प्रायश्चित्त स्थानक में से किसी भी प्रायश्चित्त स्थानक का सेवन करके माया रहित आलोचना करे तो उतना ही प्रायश्चित्त आता है लेकिन मायापूर्वक आलोचना करे तो क्रमिक पाँच मास उससे कुछ ज्यादा और छ मास का प्रायश्चित्त आता है । लेकिन माया सहित या रहित आलोचना का छ मास से अधीक प्रायश्चित्त नहीं आता

सूत्र – १५-१८

जो साधु-साध्वी एक बार या बार-बार चार मास का, साधिक चार मास का, पाँच मास का प्रायश्चित्त स्थानक में से अनोखा (दूसरा किसी भी) पाप स्थानक सेवन करके आलोचना करते हुए माया रहित या मायापूर्वक आलोचते हुए सकल संघ के सन्मुख परिहार तप की स्थापना करे, स्थापना करके उसकी वैयावच्च करवाए । यदि

सम्पूर्ण प्रायश्चित्त लगाए तो उसे वहीं परिहार तप में रख देना । वो कईं दोष लगाए उसमें जो प्रथम दोष लगा हो वो पहले आलोवे पहला दोष बाद में आलोवे, बाद के दोष पहले आलोवे, बाद के दोष बाद में आलोवे तो चार भेद मानना । सभी अपराध की आलोचना करेंगे ऐसा संकल्प करते वक्त माया रहित आलोचना करने की सोचे और आलोचना भी माया रहित करे, माया सहित सोचकर माया रहित आलोवे, माया रहित सोचकर माया सहित आलोवे, माया सहित सोचे और माया सहित आलोवे ऐसे चार भेद जानना ।

इस तरह आलोचना करके फिर सभी अपने किए हुए कर्म समान पाप को इकट्ठे करके प्रायश्चित्त दे । उस तरह प्रायश्चित्त तप के लिए स्थापन किए साधु को तप पूर्ण होने से बाहर नीकलने से पहले फिर से किसी दोष का सेवन करे तो उस साधु को पूरी तरह से उस परिहार तप में फिर से रखना चाहिए ।

सूत्र - १९

बहुत प्रायश्चित्त वाले – बहुत प्रायश्चित्त न आए हो ऐसे साधु इकट्ठे रहना या बैठना चाहे, चिन्तवन करे लेकिन स्थविर साधु को पूछे बिना न कल्पे । स्थविर को पूछकर ही कल्पे । यदि स्थविर आज्ञा दे कि तुम इकट्ठे विचरो तो इकट्ठे रहना या बैठना कल्पे, यदि स्थविर इकट्ठे विचरने की अनुमति न दे तो वैसा करना न कल्पे, यदि स्थविर की आज्ञा बिना दोनों इकट्ठे रहे, बैठे या वैसा करने का चिन्तवन करे तो उस साधु को उतने दिन का छेद या परिहार तप प्रायश्चित्त आता है ।

सूत्र – २०-२२

परिहार तप में रहे साधु बाहर स्थविर की वैयावच्च के लिए जाए तब स्थविर उस साधु को परिहार तप याद करवाए, याद न दिलाए या याद हो लेकिन जाते वक्त याद करवाना रह जाए तो साधु को एक रात का अभिग्रह करके रहना कल्पे और फिर जिस दिशा में दूसरे साधर्मिक साधु साध्वी विचरते हो उस दिशा में जाए लेकिन वहाँ विहार आदि निमित्त से रहना न कल्पे लेकिन बीमारी आदि के कारण से रहना कल्पे वो कारण पूरा होने पर दूसरे कहे की अहो आर्य ! एक या दो रात रहे तो वो वैयावच्च के लिए जानेवाले परिहार तपसी को एक या दो रात रहना कल्पे । लेकिन यदि एक या दो रात से ज्यादा रहे तो जितना ज्यादा रहे उतने दिन का छेद या परिहार तप प्रायश्चित्त आता है ।

सूत्र – २३-२५

यदि कोई साधु, गणावच्छेदक, आचार्य या उपाध्याय गण को छोड़कर एकलविहारी प्रतिमा (अभिग्रह विशेष) अंगीकार करके विचरे (बीच में किसी दोष लगाए) फिर से वो ही गण (गच्छ) को अंगीकार करके विचरना चाहे तो उन साधु, गणावच्छेदक, आचार्य या उपाध्याय को फिर से आलोचना करवाए, पड़िकमावे, उसे छेद या परिहार तप प्रायश्चित्त के लिए स्थापना करे ।

सूत्र – २६-३०

जो साधु (गच्छ) गण छोड़कर पासत्था रूप से, स्वच्छंद रूप से, कुशील रूप से, आसन्न रूप से, संसक्त रूप से विचरण करे और वो फिर से उसी (गच्छ) गण को अंगीकार करके विचरण करना चाहे तो उसमें थोड़ा भी चारित्र हो तो उसे आलोचना करवाए, पड़िकमाए, छेद या परिहार तप में स्थापना करे ।

सूत्र – ३१-३२

जो साधु गण (गच्छ) को छोड़कर (कारणविशेष) पर पाखंड़ी रूप से विचरे फिर उसी गण (गच्छ) को अंगीकार करके विहरना चाहे तो उस साधु को चारित्र छेद या परिहार तप प्रायश्चित्त की कोई प्रत्यक्ष कारण नहीं दिखता, केवल उसे आलोचना देना, लेकिन जो साधु गच्छ छोड़कर गृहस्थ पर्याय धारण करे वो फिर उसी गच्छ में आना चाहे तो उस छेद या परिहार तप प्रायश्चित्त नहीं है । उसे मूल से ही फिर से दीक्षा में स्थापन करना चाहिए ।

सूत्र – ३३-३५

जो साधु अन्य किसी अकृत्य स्थान (न करने लायक स्थान) सेवन करके आलोचना करना चाहे तो जहाँ खुद के आचार्य-उपाध्याय हो वहाँ जाकर उनसे विशुद्धि करवाना कल्पे । फिर से वैसा करने के लिए तत्पर होना और योग्य तप रूप कर्म द्वारा प्रायश्चित्त ग्रहण करना ।

यदि अपने आचार्य-उपाध्याय पास में न मिले तो जो गुणग्राही गम्भीर साधर्मिक साधु बहुश्रुत, प्रायश्चित्त दाता, आगम ज्ञाता ऐसे सांभोगिक एक मांड़लीवाले साधु हो उनके पास दोष का सेवन करके साधु आलोचना आदि करके शुद्ध हो, अब यदि एक मांड़लीवाले ऐसे साधर्मिक साधु न मिले तो ऐसे ही अन्य गच्छ के सांभोगिक, वो भी न मिले तो ऐसे ही वेशधारी साधु, वो भी न मिले तो ऐसे ही श्रावक कि जिन्होंने पहले साधुपन रखा है और बहुश्रुत-आगम ज्ञाता है लेकिन हाल में श्रावक हैं, वो भी न मिले तो समभावी गृहस्थज्ञाता और.....

वो भी न मिले तो बाहर नगर, निगम, राजधानी, खेड़ा, कसबा, मंड़प, पाटण, द्रोणमुख, आश्रम या संनिवेश के लिए पूर्व या उत्तर दिशा के सामने मुख करके दो हाथ जोड़कर मस्तक झुकाकर, मस्तक से अंजलि देकर वो दोष सेवन करके साधु इस प्रकार बोले कि जिस तरह मेरा अपराध है, ''मैं अपराधी हूँ'' ऐसे तीन बार बोले फिर अरिहंत और सिद्ध की मौजुदगी में आलोचना करे, प्रतिक्रमण, विशुद्धि करे फिर वो पाप न करने के लिए सावध हो और फिर अपने दोष के मुताबिक योग्य तपकर्म रूप प्रायश्चित्त ग्रहण करे ।

(संक्षेप में कहा जाए तो अपने आचार्य-उपाध्याय, वो न मिले तो बहुश्रुत-बहुआगमज्ञाता ऐसे सांभोगिक साधु, फिर अन्य मांड़लीवाले सांभोगिक, फिर वेशधारी साधु, फिर दीक्षा छोड़ दी हो और वर्तमान में श्रावक हो वो, फिर सम्यक् दृष्टि गृहस्थ, फिर अपने आप ईस तरह आलोचना करके शुद्ध बने ।) इस प्रकार मैं (तुम्हें) कहता हूँ ।

उद्देशक-१-का मुनि दीपरत्नसागर कृत् हिन्दी अनुवाद पूर्ण

उद्देशक-२

सूत्र – ३६-३७

एक सामाचारी वाले और साधु के साथ विचरते हो तब उसमें से एक अकृत्य स्थानक को यानि दोष सेवन करे फिर आलोचना करे तब उसे प्रायश्चित्त स्थान में स्थापित करना और दूसरे को वैयावच्च करना, लेकिन यदि दोनों अकृत्य स्थानक का सेवन करे तो एक की वडील की तरह स्थापना करके दूसरे को परिहार तप में रखना, उसका तप पूरा होने पर से वडील की तरह स्थापित करके और पहले को परिहार तप में स्थापित करना ।

सूत्र – ३८-३९

एक सामाचारी वाले कईं साधु साथ में विचरते हो और उसमें से एक दोष का सेवन करे, फिर आलोचना करे तो उसे परिहार तप के लिए स्थापित करना और दूसरे उसकी वैयावच्च करे, यदि सभी साधु ने दोष का सेवन किया हो तो एक को वडील रूप में वैयावच्च के लिए स्थापित करे और अन्य परिहार तप करे । वो पूरा होने पर वैयावच्च करनेवाले साधु परिहार तप करे और जिन्होंने तप पूरा किया है उनमें से कोई उसकी वैयावच्च करे ।

सूत्र – ४०

परिहार तप सेवन करके साधु बीमार हो जाए, दूसरे किसी दोष-स्थान का सेवन करके आलोचना करे तब यदि वो परिहार तप कर सके तो उन्हें तप में रखे और दूसरों को उसकी वैयावच्च करना, यदि वो तप वहन कर सके ऐसे न हो तो अनुपरिहारी उसकी वैयावच्च करे, लेकिन यदि वो समर्थ होने के बावजूद अनुपरिहारी से वैयावच्च करवाए तो उसे सम्पूर्ण प्रायश्चित्त में रख दो ।

सूत्र – ४१-४३

परिहार कल्पस्थित साधु बीमार हो जाए तब उस को गणावच्छेदक निर्यामणा करना न कल्पे, अग्लान होवे तो उसकी वैयावच्च जब तक वो रोगमुक्त होवे तब तक करनी चाहिए, बाद में उसे 'यथालघुसक' नामक व्यवहार में स्थापित करे । 'अनवस्थाप्य' साधु के लिए एवं 'पारंचित' साधु के लिए भी उपरोक्त कथन ही जानना ।

सूत्र – ४४-५२

व्यग्रचित्त या चित्तभ्रम होनेवाला, हर्ष के अतिरेक से पागल होनेवाला, भूत-प्रेत आदि वळगाडवाले, उन्मादवाले, उपसर्ग से ग्लान बने, क्रोध-कलह से बीमार, काफी प्रायश्चित्त आने से भयभ्रान्त बने, अनसन करके व्यग्रचित्त बने, धन के लोभ से चित्तभ्रम होकर बीमार बने, किसी भी साधु गणावच्छेदक के पास आए तो उसे बाहर नीकालना न कल्पे । लेकिन नीरोगी साधु को वो बीमारी से मुक्त न हो तब तक उसकी वैयावच्च करनी चाहिए । वो रोगमुक्त हो उसके बाद ही उसे प्रायश्चित्त में स्थापित करना चाहिए ।

सूत्र – ५३-५८

अनवस्थाप्य या पारंचित प्रायश्चित्त को वहन कर रहे साधु को गृहस्थ वेश दिए बिना गणावच्छेदक को पुनः संयम में स्थापित करना न कल्पे, गृहस्थ का (या उसके जैसे) निशानीवाला करके स्थापित करना कल्पे, लेकिन यदि उसके गण को (गच्छ या श्रमणसंघ को) प्रतीति हो यानि कि योग्य लगे तो गणावच्छेदक को वो दोनों तरह के साधु को गृहस्थवेश देकर या दिए बिना संयम में स्थापित करे ।

सूत्र – ५९

समान सामाचारीवाले दो साधु साथ में विचरते हो, उसमें से कोइ एक अन्य को आरोप लगाने को अकृत्य (दोष) स्थान का सेवन करे, फिर आलोचना करे कि मैंने अमुक साधु को आरोप लगाने के लिए दोष स्थानक सेवन किया । तब (आचार्य) दूसरे साधु को पूछे-हे आर्य ! तुमने कुछ दोष का सेवन किया है या नहीं? यदि वो कहे कि दोषसेवन किया है तो उसे प्रायश्चित्त दे और कहे कि मैंने दोष सेवन नहीं किया तो प्रायश्चित्त न दे । जो प्रमाणभूत कहे इस प्रकार (आचार्य) व्यवहार करे । अब यहाँ शिष्य पूछता है कि भगवन्त ऐसा क्यों कहा ? तब उत्तर दे कि

यह ''सच्ची प्रतिज्ञा व्यवहार'' है । यानि कि अपड़िसेवी को अपड़िसेवी और पड़िसेवी को पड़िसेवी करना ।

सूत्र – ६०

जो साधु अपने गच्छ से नीकलकर मोह के उदय से असंयम सेवन के लिए जाए । राह में चलते हुए उसके साथ भेजे गए साधु उसे उपशान्त करे तब शुभ कर्म के उदय से असंयम स्थान सेवन किए बिना फिर उसी गच्छ में आना चाहे तब उसने असंयम स्थान सेवन किया या नहीं ऐसी चर्चा स्थविर में हो तब साथ गए साधु को पूछे, हे आर्य! वो दोष का प्रतिसेवी है या अप्रतिसेवी ? यदि वो कहे कि उसने दोष का सेवन नहीं किया तो प्रायश्चित्त न दे । यदि वो कहे कि दोष सेवन किया है तो प्रायश्चित्त दे । वो साधु जिस प्रकार बोले इस प्रकार निश्चय ग्रहण करना । शिष्य पूछता है कि हे भगवन् ! ऐसा क्यों कहा ? तब गुरु उत्तर देते हैं कि, 'सच्ची प्रतिज्ञा व्यवहार' इस प्रकार है ।

सूत्र – ६१

एकपक्षी यानि एक गच्छवर्ती साधु को आचार्य-उपाध्याय कालधर्म पाए तब गण की प्रतीति के लिए यदि पदवी के योग्य कोई न मिले तो ईत्वर यानि कि अल्पकाल के लिए दूसरों को उस पदवी के लिए स्थापन करना।

सूत्र – ६२

कईं पड़िहारी (प्रायश्चित्त सेवन करनेवाले) और कईं अपड़िहारी यानि कि दोष रहित साधु इकट्ठे बसना चाहे तो वैयावच्च आदि की कारण से एक, दो, तीन, चार, पाँच या छह मास साथ रहे तो साथ आहार करे या न करे, उसके बाद एक मास साथ में आहार करे । (वृत्तिगत विशेष) स्पष्टीकरण इस यह है कि जो पड़िहारी की वैयावच्च करते हैं ऐसे अपड़िहारी साथ आहार करे लेकिन जो वैयावच्च नहीं करते वो साथ में आहार न करे । वैयावच्चवाले भी तब पूरा हो तब तक ही सहभोजी रहे, या ज्यादा से एक मास साथ रहे ।

सूत्र – ६३

परिहार कल्पस्थिति में रहे (यानि प्रायश्चित्त वहन करनेवाले) साधु को (अपने आप) अशन, पान, खादिम, स्वादिम देना या दिलाना न कल्पे । यदि स्थविर आज्ञा दे कि हे आर्य ! तुम यह आहार उस परिहारी को देना या दिलाना तो देना कल्पे यदि स्थविर की आज्ञा हो तो परिहारी साधु को विगई लेना कल्पे ।

सूत्र – ६४

परिवार कल्पस्थित साधु स्थविर की वैयावच्च करते हो तब (अपने आहार अपने पात्र में और स्थविर का आहार स्थविर के पात्र में ऐसे अलग-अलग लाए) पड़िहारी अपना आहार लाकर बाहर स्थविर की वैयावच्च के लिए फिर से जाते हैं तब (यदि) स्थविर कहे कि हे आर्य ! तुम्हारे पात्र में हमारे आहार-पानी भी साथ लाना । हम वो आहार करेंगे, पानी पीएंगे तो पड़िहारी के साथ आहार पानी लाना कल्पे । अपड़िहारी को पड़िहारी के पात्र में लाए गए अशन आदि खाना या पीना न कल्पे लेकिन अपने पात्र में, हमारे भाजन या कमढ़ग-एक पात्र विशेष या मुट्ठी या हाथ पर लेकर खाना या पीना कल्पे । इस प्रकार का कल्प अपरिहारी का परिहारी के लिए जानना ।

सूत्र – ६५

परिहार कल्प स्थित साधु स्थविर के पात्र लेकर बाहर स्थविर की वैयावच्च के लिए जाते देखकर स्थविर उस साधु को ऐसा कहे कि हे आर्य ! तुम्हारा आहार भी साथ में उसी पात्र में लाना और तुम भी उसे खाना और पानी पीना तो इस प्रकार लाना कल्पे लेकिन वहाँ परिहारी को अपरिहारी स्थविर के पात्र में अशन आदि आहार खाना या पीना न कल्पे लेकिन वो परिहारी साधु अपना पात्र या भाजन या) या मुट्ठी या हाथ में लेकर खाना या पीना कल्पे । इस प्रकार अपरिहारी के लिए परिहारी का कल्प आचार जानना–इस प्रकार मैं (तुम्हें) कहता हूँ ।

उद्देशक-२-का मुनि दीपरत्नसागर कृत् हिन्दी अनुवाद पूर्ण

उद्देशक-३

सूत्र – ६६

साधु गच्छ नायकपन धारण करना चाहे तो हे भगवंत ! यदि वो साधु आयारो-निसीह आदि सूत्र संग्रह रहित है तो गच्छनायकपन धारण कर सके ? यदि ऐसा न हो तो गच्छ नायकपन धारण करना न कल्पे लेकिन यदि वो आयारो-निसीह आदि सूत्र संग्रह सहित और शिष्य आदि परिवारवाला हो तो गच्छ नायकपन धारण कर सके ।

सूत्र – ६७

जो कोई साधु गच्छ नायकपन धारण करना चाहे उसे स्थविर को पूछे बिना गच्छ नायकपन धारण करना न कल्पे स्थविर को पूछकर गच्छ नायकपन धारण करना कल्पे । स्थविर आज्ञा दे तो कल्पे और आज्ञा न दे तो न कल्पे । जितने दिन वो आज्ञा रहित गच्छ नायकपन धारे तो उतने दिन का छेद या तप का प्रायश्चित्त आता है ।

सूत्र – ६८-६९

तीन साल का पर्याय हो ऐसे श्रमण-निर्ग्रन्थ हो और फिर आचार-संयम, प्रवचन-गच्छ की सारसंभाळादिक संग्रह और पाणेसणादि उपग्रह के लिए कुशल हो, जिसका आचार खंड़ित नहीं हुआ, भेदन नहीं हुआ, सबल दोष नहीं लगा, संक्लिष्ट आचार युक्त चित्तवाला नहीं, बहुश्रुत, कईं आगम के ज्ञाता, जघन्य से आचार प्रकल्प-निसीह सूत्रार्थ के धारक हैं ऐसे साधु को उपाध्याय पद देना कल्पे–लेकिन जो उक्त आचार आदि में कुशल नहीं है, और फिर अक्षत आचार आदि नहीं है ऐसे श्रमण-निर्ग्रन्थ का तीन साल का दीक्षापर्याय हो तो भी पदवी देना न कल्पे ।

सूत्र – ७०-७१

पाँच साल के पर्यायवाले श्रमण-निर्ग्रन्थ यदि आचार-संयम, प्रवचन-गच्छ की सर्व फिक्र की प्रज्ञा–उपधि आदि के उपग्रह में कुशल हो, जिसका आचार छेदन-भेदन न हो, क्रोधादिक से जिसका चारित्र मलिन नहीं और फिर जो बहुसूत्री आगमज्ञाता है और जघन्य से दसा-कप्प-व्यवहार सूत्र के धारक हैं उन्हें यह पद देना न कल्पे ।

सूत्र – ७२-७३

आठ साल के पर्यायवाले श्रमण-निर्ग्रन्थ में ऊपर के सर्व गुण और जघन्य से ठाण, समवाय ज्ञाता हो उसे आचार्य से गणावच्छेदक पर्यन्त की पदवी देना कल्पे, लेकिन जिनमें उक्त गुण नहीं है उसे पदवी देना न कल्पे ।

सूत्र – ७४

निरुद्धवास पर्याय – (एक बार दीक्षा लेने के बाद जिसका पर्याय छेद हुआ है ऐसे) श्रमण निर्ग्रन्थ को उसी दिन आचार्य-उपाध्याय पदवी देना कल्पे, हे भगवंत ! ऐसा क्यों कहा ? उस स्थविर साधु को पूर्व के तथारूप कुल हैं । जैसे कि प्रतीतिकारक, दान देने में धीर, भरोसेमंद, गुणवंत, साधु बार-बार वहोरने पधारे उसमें खुशी हो और दान देने में दोष न लगाए ऐसे, घर में सबको दान देने की अनुज्ञा है, सभी समरूप से दान देनेवाले हैं और फिर उस कुल की प्रतीति करके-धृति करके यावत् समरूप दान करके जो निरुद्ध पर्यायवाले श्रमण निर्ग्रन्थ से दीक्षा ली उन्हें आचार्य-उपाध्याय रूप से उसी दिन भी स्थापन करना कल्पे ।

सूत्र – ७५

निरुद्ध वास पर्याय–पहले दीक्षा ली हो उसे छोड़कर पुनः दीक्षा लिए कुछ साल हुए हो ऐसे श्रमण-निर्ग्रन्थ को आचार्य-उपाध्याय कालधर्म पाए तब पदवी देना कल्पे । यदि वो बहुसूत्री न हो तो भी समुचयरूप से वो आचार प्रकल्प-निसीह के कुछ अध्ययन पढ़े हैं और बाकी के पढ़ूँगा ऐसा चिन्तवन करते हैं वो यदि पढ़े तो उसे आचार्य-उपाध्याय की पदवी देना कल्पे, लेकिन पढ़ूँगा ऐसा कहकर न पढ़े तो उसे पदवी देना न कल्पे ।

सूत्र – ७६-७७

वो साधु जो दीक्षा में छोटे हैं । तरुण हैं । ऐसे साधु की आचार्य-उपाध्याय काल कर गए हो उनके बिना

रहना न कल्पे, पहले आचार्य और फिर उपाध्याय की स्थापना करके रहना कल्पे । ऐसा क्यों कहा ? वो साधु नए हैं–तरुण हैं इसलिए उसे आचार्य-उपाध्याय आदि के संग बिना रहना न कल्पे, यदि साध्वी नवदीक्षित और तरुण हो तो उसे आचार्य-उपाध्याय प्रवर्तिनी कालधर्म पाए तब उनके बिना रहना न कल्पे, लेकिन पहले आचार्य फिर उपाध्याय, फिर प्रवर्तिनी ऐसे स्थापना करके तीनों के संग में रहना कल्पे ।

सूत्र – ७८-८०

जो साधु गच्छ छोड़कर जाए, फिर मैथुन सेवन करे, सेवन करके फिर दीक्षा ले तो उसे दीक्षा लेने के बाद तीन साल तक आचार्य से गणावच्छेदक तक का पदवी देना या धारण करना न कल्पे । तीन साल बीतने के बाद चौथे साल स्थिर हो, उपशान्त हो, क्लेष से निवर्ते, विषय से निवर्ते ऐसे साधु को आचार्य से गणावच्छेदक तक की छह पदवी देना या धारण करना कल्पे, लेकिन यदि गणावच्छेदक गणावच्छेदक की पदवी छोड़े बिना मैथुनधर्म का सेवन करे तो जावज्जीव के लिए उसे आचार्य से गणावच्छेदक में से एक भी पदवी देना या धारण करना न कल्पे, लेकिन यदि वो गणावच्छेदक की पदवी छोड़कर मैथुन सेवन करे तो तीन साल तक उसे पदवी देना न कल्पे, तीन साल बीतने के बाद चौथे साल वो स्थिर, उपशान्त, विषय, कषाय से निवर्तन किया हो तो आचार्य यावत् गणावच्छेदक की पदवी देना या धारण करना कल्पे ।

सूत्र – ८१-८२

आचार्य-उपाध्याय उनका पद छोड़े बिना मैथुन सेवन करे तो जावज्जीव के लिए उसे आचार्य यावत् गणावच्छेदक के छह पदवी देना या धारण करना न कल्पे, लेकिन यदि वो पदवी छोड़कर जाए, फिर मैथुन धर्म सेवन करे तो उसे तीन साल तक आचार्य पदवी देना या धारण करना न कल्पे लेकिन चौथा साल बैठे तब यदि वो स्थिर, उपशान्त, कषाय-विषय रहित हुआ हो तो उसे आचार्य आदि पदवी देना या धारण करना कल्पे ।

सूत्र – ८३-८७

यदि कोई साधु गच्छ में से नीकलकर विषय सेवन के लिए द्रव्यलिंग छोड़ देने के लिए देशान्तर जाए, मैथुन सेवन करके फिर से दीक्षा ले । तीन साल तक उसे आचार्य आदि छ पदवी देना या धारण करना न कल्पे, तीन साल पूरे होने से चौथा साल बैठे तब यदि वो साधु स्थिर-उपशान्त-विषय-कषाय से निवर्तित हो तो उन्हें पदवी देना-धारण करना कल्पे, यदि गणावच्छेदक, आचार्य या उपाध्याय अपनी पदवी छोड़े बिना द्रव्यलिंग छोड़कर असंयमी हो जाए तो जावज्जीव आचार्य-उपाध्याय पदवी देना या धारण करना न कल्पे, यदि पदवी छोड़कर जाए और पुनः दीक्षा ग्रहण करे तो तीन साल पदवी देना न कल्पे आदि सर्व पूर्ववत् जानना ।

सूत्र – ८८-९४

साधु जो किसी एक या ज्यादा, गणावच्छेदक, आचार्य, उपाध्याय या सभी बहुश्रुत हो, कईं आगम के ज्ञाता हो, कईं गाढ़-आगाढ़ के कारण से माया-कपट सहित झूठ बोले, असत्य भाखे उस पापी जीव को जावज्जीव के लिए आचार्य-उपाध्याय-प्रवर्तक, स्थविर, गणि या गणावच्छेदक की पदवी देना या धारण करना न कल्पे ।

उद्देशक-३-का मुनि दीपरत्नसागर कृत् हिन्दी अनुवाद पूर्ण

उद्देशक-४

सूत्र – ९५-९६

आचार्य-उपाध्याय को गर्मी या शीतकाल में अकेले विचरना न कल्पे, खुद के सहित दो के साथ विचरना कल्पे ।

सूत्र – ९७-९८

गणावच्छेदक को खुद के सहित दो लोगों को गर्मी या शीतकाल में विचरना न कल्पे, खुद के सहित तीन को विचरना कल्पे ।

सूत्र – ९९-१००

आचार्य-उपाध्याय को खुद के सहित दो को वर्षावास रहना न कल्पे, तीन को कल्पे ।

सूत्र – १०१-१०२

गणावच्छेदक को खुद के सहित तीन को वर्षावास रहना न कल्पे, चार को कल्पे ।

सूत्र – १०३-१०४

वे गाँव, नगर, निगम, राजधानी, खेड़ा, कसबो, मंड़प, पाटण, द्रोणमुख, आश्रम, संवाह सन्निवेश के लिए अनेक आचार्य, उपाध्याय खुद के साथ दो, अनेक गणावच्छेदक को खुद के साथ तीन को आपस में गर्मी या शीत काल में विचरना कल्पे और.....

अनेक आचार्य-उपाध्याय को खुद के साथ तीन और अनेक गणावच्छेदक को खुद के साथ चार को अन्योन्य निश्रा में वर्षावास रहना कल्पे ।

सूत्र – १०५-१०६

एक गाँव से दूसरे गाँव विचरते, या चातुर्मास रहे साधु जो आचार्य आदि को आगे करके विचरते हो वो आचार्य आदि शायद काल करे तो अन्य किसी को अंगीकार करके उस पदवी पर स्थापित करके विचरना कल्पे ।

यदि किसी को कल्पाक-वडील रूप से स्थापन करने के उचित न हो और खुद आचार प्रकल्प-निसीह पढ़े हुए न हो तो उसको एक रात्रि की प्रतिज्ञा अंगीकार करना, जिन दिशा में दूसरे साधर्मिक-एक मांड़लीवाले साधु विचरते हो वो दिशा ग्रहण करना, जो कि उसे विहार निमित्त से वहाँ रहना न कल्पे लेकिन बीमारी आदि की कारण से वहाँ बसना कल्पे, उसके बाद कोई साधु ऐसा कहे कि हे आर्य ! एक या दो रात यहाँ रहो, तो एक, दो रात वहाँ रहे यदि उससे ज्यादा रहे तो उसे उतनी रात का छेद या तप प्रायश्चित्त आता है ।

सूत्र – १०७-१०८

आचार्य-उपाध्याय बीमारी उत्पन्न हो तब या वेश छोड़कर जाए तब दूसरों को ऐसा कहे कि हे आर्य ! मैं काल करु तब इसे आचार्य की पदवी देना । वे यदि आचार्य पदवी देने के योग्य हो तो उसे पदवी देना । योग्य न हो तो न देना । यदि कोई दूसरे वो पदवी देने के लिए योग्य हो तो उसे देना, यदि कोई वो पदवी के लिए योग्य न हो तो पहले कहा उसे ही पदवी देना ।

पदवी देने के बाद कोई साधु ऐसा कहे कि हे आर्य ! तेरी यह पदवी दोषयुक्त है इसलिए छोड़ दो । ऐसा कहने से वो साधु पद छोड़ दे तो उसे दीक्षा का छेद या तप का प्रायश्चित्त नहीं होता । यदि पद छोड़ने योग्य हो और पदवी न छोड़े तो उन सबको और पदवीधर को दीक्षा का छेद या परिहारतप प्रायश्चित्त आता है ।

सूत्र – १०९-११०

आचार्य-उपाध्याय जो नवदीक्षित छेदोपस्थापनीय (बड़ी दीक्षा) को उचित हुआ है ऐसा जानने के बाद भी या विस्मरण होने से उसके वडील चार या पाँच रात से ज्यादा उस नवदीक्षित को उपस्थापना न करे तो आचार्य

आदि को प्रायश्चित्त आता है । यदि उसके साथ पिता आदि किसी वडील ने दीक्षा ली हो और पाँच, दस या पंद्रह रात के बाद दोनों को साथ में उपस्थापन करे तो किसी छेद या परिहार प्रायश्चित्त नहीं आता । लेकिन यदि वडील की उपस्थापना न करनी हो फिर भी नवदीक्षित की उपस्थापना न करे तो जितने दिन उपस्थापना न करे उतने दिन का छेद या परिहार तप प्रायश्चित्त आता है ।

सूत्र – १११

आचार्य-उपाध्याय स्मरण रखे या भूल जाए या नवदीक्षित साधु को (नियत वक्त के बाद) भी दशरात्रि जाने के बाद भी उपस्थापना (वड़ी दीक्षा) हुई नहीं, नियत सूत्रार्थ प्राप्त उस साधु के किसी वडील हो और उसे वडील रखने के लिए वो पढ़े नहीं तब तक साधु को उपस्थापना न करे तो कोई प्रायश्चित्त नहीं आता लेकिन यदि किसी ऐसे कारण बिना उपस्थापना न करे तो ऐसा करनेवाले आचार्य आदि को एक साल तक आचार्य पदवी देना न कल्पे ।

सूत्र – ११२

जो साधु गच्छ को छोड़कर ज्ञान आदि कारण से अन्य गच्छ अपनाकर विचरे तब कोई साधर्मिक साधु देखकर पूछे कि हे आर्य ! किस गच्छ को अंगीकार करके विचरते हो ? तब उस गच्छ के सभी रत्नाधिक साधु के नाम दे । यदि रत्नाधिक पूछे कि किसकी निश्रा में विचरते हो ? तो वो सब बहुश्रुत के नाम दे और कहे कि जिस तरह भगवंत कहेंगे उस तरह उनकी आज्ञा के मुताबिक रहेंगे ।

सूत्र – ११३

बहुत साधर्मिक एक मांड़लीवाले साधु ईकट्ठे विचरना चाहे तो स्थविर को पूछे बिना वैसे विचरना या रहना न कल्पे । स्थविर को पूछे तब भी यदि वो आज्ञा दे तो इकट्ठे विचरना-रहना कल्पे यदि आज्ञा न दे तो न कल्पे । यदि आज्ञा के बिना विचरे तो जितने दिन आज्ञा बिना विचरे उतने दिन का छेद या परिहार तप प्रायश्चित्त आता है ।

सूत्र – ११४

आज्ञा बिना चलने के लिए प्रवृत्त साधु चार-पाँच रात्रि विचरकर स्थविर को देखे तब उनकी आज्ञा बिना जो विचरण किया उसकी आलोचना करे, प्रतिक्रमण करे, पूर्व की आज्ञा लेकर रहे लेकिन हाथ की रेखा सूख जाए उतना काल भी आज्ञा बिना न रहे ।

सूत्र – ११५

कोई साधु आज्ञा बिना अन्य गच्छ में जाने के लिए प्रवर्ते, चार या पाँच रात्रि के अलावा आज्ञा बिना रहे फिर स्थविर को देखकर फिर से आलोवे, फिर से प्रतिक्रमण करे, आज्ञा बिना जितने दिन रहे उतने दिन का छेद या परिहार तप प्रायश्चित्त आता है ।

साधु के संयम भाव को टिकाए रखने के लिए दूसरी बार स्थविर की आज्ञा माँगकर रहे । उस साधु को ऐसा कहना कल्पे कि हे भगवंत ! मुझे दूसरे गच्छ में रहने की आज्ञा दो तो रहूँ । आज्ञा बिना तो दूसरे गच्छ में हाथ की रेखा सूख जाए उतना काल भी रहना न कल्पे, आज्ञा के बाद ही वो काया से स्पर्श करे यानि प्रवृत्ति करे ।

सूत्र – ११६

अन्य गच्छ में जाने के लिए प्रवृत्त होकर निवर्तेल साधु चार या पाँच रात दूसरे गच्छ में रहे फिर स्थविर को देखकर सत्यरूप से आलोचना-प्रतिक्रमण करे, आज्ञा लेकर पूर्व आज्ञा में रहे लेकिन आज्ञा बिना पलभर भी न रहे

सूत्र – ११७

आज्ञा बिना चलने से निवृत्त होनेवाले साधु चार या पाँच रात गच्छ में रहे फिर स्थविर को देखकर फिर से आलोचना करे – प्रतिक्रमण करे – जितनी रात आज्ञा बिना रहे उतनी रात का छेद या परिहार तप प्रायश्चित्त स्थविर उसे दे । साधु संयम के भाव से दूसरी बार स्थविर की आज्ञा लेकर अन्य गच्छ में रहे आदि पूर्ववत् ।

सूत्र – ११८-११९

दो साधर्मिक साधु ईकट्ठे होकर विचरे । उसमें एक शिष्य है और एक रत्नाधिक है । शिष्य को पढ़े हुए साधु का परिवार बड़ा है, रत्नाधिक को ऐसा परिवार छोटा है । वो शिष्य रत्नाधिक के पास आकर उन्हें भिक्षा लाकर दे और विनयादिक सर्व कार्य करे, अब यदि रत्नाधिक का परिवार बड़ा हो और शिष्य का छोटा हो तो रत्नाधिक ईच्छा होने पर शिष्य को अंगीकार करे, ईच्छा न हो तो अंगीकार न करे, ईच्छा हो तो आहार-पानी देकर वैयावच्च करे, ईच्छा न हो तो न करे ।

सूत्र – १२०-१२२

दो साधु, गणावच्छेदक, आचार्य या उपाध्याय बड़ों को आपस में वंदन आदि करे बिना रहना न कल्पे, लेकिन अन्योन्य एक-एक को वडील रूप से अपनाकर विचरना कल्पे ।

सूत्र – १२३-१२६

कुछ साधु, गणावच्छेदक, आचार्य या यह सब ईकट्ठे होकर विचरे उनको अन्योन्य एक एक को वडील किए बिना विचरण न कल्पे । लेकिन छोटों को बड़ों को वडील की तरह स्थापित करके–वंदन करके विचरना कल्पे –ऐसा मैं (तुम्हें) कहता हूँ ।

उद्देशक-४-का मुनि दीपरत्नसागर कृत् हिन्दी अनुवाद पूर्ण

उद्देशक-५

सूत्र – १२७-१२८

प्रवर्तिनी साध्वी को गर्मी और शीतकाल में खुद के साथ दो साध्वी का विचरना न कल्पे, तीन हो तो कल्पे।

सूत्र – १२९-१३०

गणावच्छेदणी साध्वी का शेष काल में खुद के साथ तीन को विचरना न कल्पे, चार को कल्पे ।

सूत्र – १३१-१३४

प्रवर्तिनी को वर्षावास यानि चौमासी रहना खुद के सहित तीन साध्वी को और गणावच्छेदणी को चार साध्वी को न कल्पे, लेकिन कुल चार साध्वी हो तो प्रवर्तिनी को ओर पाँच साध्वी हो तो गणावच्छेदणी को कल्पे ।

सूत्र – १३५-१३६

वो गाँव यावत् संनिवेश के लिए कईं प्रवर्तिनी को खुद के सहित तीन को, कईं गणावच्छेदणी को खुद के सहित चार को शेषकाल में अन्योन्य एक एक की निश्रा में विचरना कल्पे, वर्षावास रहना हो तो कईं प्रवर्तिनी हो तो खुद के साथ चार को और कईं गणावच्छेदणी हो तो पाँच की अन्योन्य निश्रा में रहना कल्पे ।

सूत्र – १३७-१३८

एक गाँव से दूसरे गाँव विचरते हुए या वर्षावास में रहे साध्वी जिन्हें आगे करके विचरते हो तो बड़े साध्वी शायद काल करे तो उस समुदाय में रहे दूसरे किसी उचित साध्वी को वडील स्थापित करके उसकी आज्ञा में रहे, यदि वडील की तरह वैसे कोई उचित न मिले और अन्य साध्वी आचार-प्रकल्प से अज्ञान हो तो एक रात का अभिग्रह लेकर, जिन दिशा में मांड़ली की अन्य साध्वी हो वहाँ जाना कल्पे जो कि वहाँ विहार निमित्त से रहना न कल्पे लेकिन बीमारी आदि की कारण से रहना कल्पे ।

कारण पूरा होने पर यदि किसी दूसरे साध्वी कहे कि हे आर्या ! एक या दो रात्रि यहाँ रहो तो रहना कल्पे, उसके अलावा जितनी रात रहे उतना छेद या परिहार तप आता है

सूत्र – १३९-१४०

प्रवर्तिनी साध्वी बीमारी आदि कारण से या मोह के उदय से चारित्र छोड़कर (मैथुन अर्थे) देशान्तर जाए तब अन्य को ऐसा कहे कि मैं काल करूँ तब या मेरे बाद मेरी पदवी इस साध्वी को देना । यदि वो उचित लगे तो पदवी दे, उचित न लगे तो न दे । उसे समुदाय में अन्य कोई योग्य लगे तो उसे पदवी दे, यदि कोई उचित न लगे तो पहले कहे गए अनुसार पदवी दे ।

ऐसा करने के बाद कोई साध्वी ऐसा कहे कि हे आर्या ! तुम्हारा यह पदवी दोषयुक्त है इसलिए उसे छोड़ दो तब वो साध्वी यदि पद छोड़ने के लिए प्रवृत्त न हो तो जितने दिन उनकी पदवी रहे उतने दिन का सबको छेद या तप प्रायश्चित्त आता है ।

सूत्र – १४१-१४२

दीक्षा आश्रित करके नए या तरुण साधु या साध्वी हो उसे आचार प्रकल्प-निसीह अध्ययन भूल जाए तो उसे पूछो कि हे आर्य ! किस कारण से तुम आचार प्रकल्प अध्ययन भूल गए, बीमारी से या प्रमाद से ?

यदि वो ऐसा कहे कि बीमारी से नहीं लेकिन प्रमाद से भूल गए तो उसे जावज्जीव के लिए पदवी मत देना। यदि ऐसा कहे कि बीमारी से भूल गए प्रमाद से नहीं तो फिर से पाठ दो और पदवी भी दो लेकिन यदि वो पढ़ूँगा ऐसा कहकर पढ़ाई न करे या पहले का याद न करे तो उसे पदवी देना न कल्पे ।

सूत्र – १४३-१४४

स्थविर साधु उम्र होने से आचार प्रकल्प अध्ययन भूल जाए तब यदि फिर से अध्ययन याद करे तो उसे

आचार्य आदि छ पदवी देना या धारण करना कल्पे ।

यदि उसे याद न आए तो पदवी देना–धारण करना न कल्पे, वो स्थविर यदि शक्ति हो तो बैठे-बैठे आचार प्रकल्प याद करे और शक्ति न हो तो सोते-सोते या बैठकर भी याद करे ।

सूत्र – १४५-१४६

यदि साधु-साध्वी सांभोगिक हो (गोचरी-शय्यादि उपधि आपस में लेने-देने की छूट हो वैसे एक मांड़ली वाले सांभोगिक कहलाते हैं ।) उन्हें कोई दोष लगे तो अन्योन्य आलोचना करना कल्पे, यद वहाँ कोई उचित आलोचना दाता हो तो उनके पास से आलोचना करना कल्पे ।

यदि वहाँ कोई उचित न हो तो आपस में आलोचना करना कल्पे, लेकिन वो सांभोगिक साधु आलोचना करने के बाद एक दूसरे की वैयावच्च करना न कल्पे । यदि वहाँ कोई दूसरा साधु हो तो उनसे वैयावच्च करवाए । यदि न हो तो बीमारी आदि की कारण से आपस में वैयावच्च करवाए ।

सूत्र – १४७

साधु या साध्वी को रात में या संध्या के वक्त लम्बा साँप डँस ले तब साधु स्त्री के पास या साध्वी पुरुष से दवाई करवाए ऐसा अपवाद मार्ग में स्थविर कल्पी को कल्पे । ऐसे अपवाद का सेवन करनेवाला स्थविर कल्पी को परिहार तप प्रायश्चित्त भी नहीं आता । यह स्थविर कल्प का आचार कहा ।

जिनकल्पी को इस तरह अपवाद मार्ग का सेवन न कल्पे, यह आचार जिनकल्पी का बताया ।

उद्देशक-५-का मुनि दीपरत्नसागर कृत् हिन्दी अनुवाद पूर्ण

उद्देशक-६

सूत्र – १४८

जो किसी साधु अपने रिश्तेदार के घर जाना चाहे तो स्थविर को पूछे बिना जाना न कल्पे, पूछने के बाद भी यदि जो स्थविर आज्ञा दे तो कल्पे और आज्ञा न दे तो न कल्पे । यदि आज्ञा बिना जाए तो जितने दिन रहे उतना छेद या तप प्रायश्चित्त आता है । अल्पसूत्री या आगम के अल्पज्ञाता को अकेले ही अपने रिश्तेदार के वहाँ जाना न कल्पे । दूसरे बहुश्रुत या कईं आगम के ज्ञाता के साथ रिश्तेदार के वहाँ जाना कल्पे ।

यदि पहले चावल हुए हो लेकिन दाल न हुई हो तो चावल लेना कल्पे लेकिन दाल लेना न कल्पे । यदि पहले दाल हुई हो और जाने के बाद चावल बने तो दाल लेना कल्पे, लेकिन चावल लेना न कल्पे । दोनों पहले से ऊतारे गए हो तो दोनों लेना कल्पे और एक भी चीज न हुई हो तो कुछ भी लेना न कल्पे यानि साधु के जाने से पहले जो कुछ तैयार हो वो सब कल्पे और जाने के बाद तैयार हो ऐसा कोई भी आहार न कल्पे ।

सूत्र – १४९

आचार्य-उपाध्याय को गण के विषय में पाँच अतिशय बताए हैं । उपाश्रय में पाँव घिसकर पूंजे या विशेष प्रमार्जे तो जिनाज्ञा का उल्लंघन नहीं होता, उपाश्रय में मल-मूत्र का त्याग करे, शुद्धि करे, वैयावच्च करने का सामर्थ्य हो तो ईच्छा हो तो वैयावच्च करे, ईच्छा न हो तो वैयावच्च न करे, उपाश्रय में एक-दो रात्रि निवास करे या उपाश्रय के बाहर एक-दो रात्रि निवास करे तो जिनाज्ञा का उल्लंघन नहीं होता ।

सूत्र – १५०

गणावच्छेदक के गण के लिए दो अतिशय बताए हैं । गणावच्छेदक उपाश्रय में या उपाश्रय के बाहर एक या दो रात निवास करे तो जिनाज्ञा का उल्लंघन नहीं होता ।

सूत्र – १५१

वो गाँव, नगर, राजधानी यावत् संनिवेश के लिए, एक ही आँगन, एक ही द्वार-प्रवेश, निर्गमन का एक ही मार्ग हो वहाँ कईं अतिथि साधु को (श्रुत के अज्ञान को) ईकट्ठे होकर रहना न कल्पे । यदि वहाँ आचार प्रकल्प के ज्ञात साधु हो तो रहना कल्पे लेकिन यदि न हो तो वहाँ जितने दिन रहे उतने दिन का तप या छेद प्रायश्चित्त आता है।

सूत्र – १५२

वो गाँव यावत् संनिवेश के लिए अलग वाड़ हो, दरवाजे और आने-जाने के मार्ग भी अलग हो वहाँ कईं अगीतार्थ साधु को और श्रुत अज्ञानी को ईकट्ठे होकर रहना न कल्पे । यदि वहाँ कोई एक आचार प्रकल्प–निसीह आदि को जाननेवाले हो तो उनके साथ तीन रात में आकर साथ रहना कल्पे । ऐसा करते-करते किसी छेद या परिहार तप प्रायश्चित्त नहीं आता । लेकिन यदि आचार प्रकल्पधर कोई साधु वहाँ न हो तो जो साधु तीन रात वहाँ निवास करे तो उन सबको जितने दिन रहे उतने दिन का तप या छेद प्रायश्चित्त आता है ।

सूत्र – १५३-१५४

वो गाँव यावत् संनिवेश के लिए कईं वाड़-दरवाजा आने-जाने का मार्ग हो वहाँ बहुश्रुत या कईं आगम के ज्ञाता का अकेले रहना न कल्पे, यदि उन्हें न कल्पे तो अल्पश्रुतधर या अल्प आगमज्ञाता को किस तरह कल्पे ? यानि न कल्पे, लेकिन एक ही वाड़, एक दरवाजा, आने-जाने का एक ही मार्ग हो वहाँ बहुश्रुत – आगमज्ञाता साधु एकाकीपन से रहना कल्पे । वहाँ ऊभयकाल श्रमण भाव में जागृत रहकर अप्रमादी होकर सावधान होकर विचरे ।

सूत्र – १५५

जिस जगह कईं स्त्री-पुरुष मोह के उदय से मैथुन कर्म प्रारम्भ कर रहे हो वो देखकर श्रमण–दूसरे किसी अचित्त छिद्र में शुक्र पुद्गल नीकाले या हस्तकर्म भाव से सेवन करे तो एक मास का गुरु प्रायश्चित्त आता है ।

लेकिन यदि हस्तकर्म की बजाय मैथुन भाव से सेवन करे तो गुरु चौमासी प्रायश्चित्त आता है ।

सूत्र – १५६-१५९

साधु या साध्वी को दूसरे गण से आए हुए, स्वगण में रहे साध्वी या जो खंड़ित-शबल भेदित या संक्लिष्ट आचारवाले हैं । और फिर जिस साध्वी ने उस पापस्थान की आलोचना, प्रतिक्रमण, निंदा, गर्हा, निर्मलता, विशुद्धि नहीं की, न करने के लिए तत्पर नहीं हो, दोष अनुसार उचित प्रायश्चित्त नहीं किया, ऐसे साध्वी को साता पूछना, संवास करना, मूत्रादि वांचना देनी, एक मांड़ली भोजन लेना, थोड़े वक्त के बाद जावज्जीव का पदवी देना या धारण करना न कल्पे, लेकिन यदि उस पापस्थानक की आलोचना, प्रतिक्रमण आदि करके फिर से वो पाप सेवन न करने के लिए बेचैन हो, उचित प्रायश्चित्त ग्रहण करे, तो उसे एक मंड़ली में स्थापित करने यावत् पदवी देना कल्पे

उद्देशक-६-का मुनि दीपरत्नसागर कृत् हिन्दी अनुवाद पूर्ण

उद्देशक-७

सूत्र – १६०-१६२

जो साधु-साध्वी सांभोगिक हैं यानि एक सामाचारी वाले हैं वहाँ साधु को पूछे बिना साध्वी खंड़ित, सबल, भेदित या संक्लिष्ट आचारवाले किसी अन्य गण के साध्वी को उसे पापस्थानक की आलोचना, प्रतिक्रमण, प्रायश्चित्त आदि किए बिना उनकी शाता पूछना, वांचना देना, एक मंड़लीवाले के साथ भोजन करना, साथ रहना, थोड़े वक्त या हंमेशा के लिए किसी पदवी देना आदि कुछ न कल्पे,

यदि वो आलोचना आदि सब करे तो गुरु की आज्ञा के बाद उनकी शाता पूछना यावत् पदवी देना या धारण करना कल्पे, इस तरह के साध्वी को भी यदि वो साध्वी को साथ रखना स्व-समुदाय के साध्वी न चाहे तो उनके गच्छ में वापस जाना चाहिए ।

सूत्र – १६३

यदि कोई साधु-साध्वी समान सामाचारी वाले हैं उनमें से किसी साधु को परोक्ष तरह या दूसरे स्थानक में प्रत्यक्ष बताए बिना विसंभोगि यानि मांड़ली बाहर करना न कल्पे । उसी स्थानक में प्रत्यक्ष उनके सन्मुख कहकर विसंभोगि करना कल्पे । सन्मुख हो तब कहे कि हे आर्य ! इस कुछ कारण से अब तुम्हारे साथ सांभोगिक व्यवहार न करूँ । ऐसा कहकर विसंभोगी करना । यदि वो अपने पाप कार्य का पश्चात्ताप करे तो उसे विसंभोगी करना न कल्पे । लेकिन यदि पश्चात्ताप न करे तो उसे मुँह पर कहकर विसंभोगी करे ।

सूत्र – १६४

यदि कोई साधु-साध्वी समान सामाचारी वाले हैं उनमें से किसी साध्वी को दूसरे साध्वी ने प्रत्यक्ष संभोगी-पन में से विसंभोगीपन यानि की मांड़ली व्यवहार बंध करना न कल्पे । परोक्ष तरह अन्य के द्वारा कहकर विसंभोगी पन करना कल्पे । अपने आचार्य-उपाध्याय को ऐसा कहे कि कुछ कारण से अमुक साध्वी के साथ मांड़ली व्यवहार बंध किया है । अब यदि वो साध्वी पश्चात्ताप करे तो बताकर व्यवहार बंध कर देना न कल्पे । यदि वो पश्चात्ताप न करे तो विसंभोगी करना कल्पे ।

सूत्र – १६५-१६८

साधु या साध्वी को अपने खुद के हित के लिए किसी को दीक्षा देना, मुँड़ करना, आचार शीखलाना, शिष्यत्व देना, उपस्थापन करना, साथ रहना, आहार करना या थोड़े दिन या हंमेशा के लिए पदवी देना न कल्पे, दूसरों के लिए दीक्षा देना आदि सब काम करना कल्पे ।

सूत्र – १६९-१७०

साध्वी को विकट दिशा में विहार करना या धारण करना न कल्पे, साधु को कल्पे ।

सूत्र – १७१-१७२

साधु को विकट दिशा के लिए कठिन वचन आदि का प्रायश्चित्त लेकर वहाँ बैठे क्षमापना करना न कल्पे, साध्वी को कल्पे ।

सूत्र – १७३-१७४

साधु-साध्वी को विकाल में स्वाध्याय करना न कल्पे, यदि साधु की निश्रा-आज्ञा हो तो साध्वी को विकाल में भी स्वाध्याय करना कल्पे ।

सूत्र – १७५-१७६

साधु-साध्वी को असज्झाय में स्वाध्याय करना न कल्पे, सज्झाय में (स्वाध्यायकाले) स्वाध्याय करना कल्पे।

सूत्र – १७७

साधु-साध्वीको अपनी शारीरिक असज्झाय में सज्झाय करना न कल्पे, अन्योन्य वांचना देना कल्पे ।

सूत्र – १७८-१७९

तीन साल के दीक्षा पर्यायवाले साधु को तीस साल के दीक्षावाले साध्वी को उपाध्याय के रूप में अपनाना कल्पे, पाँच साल के पर्यायवाले साधु को ६० साल के पर्यायवाले साध्वी को उपाध्याय के रूप में अपनाना कल्पे ।

सूत्र – १८०

एक गाँव से दूसरे गाँव विहार करते साधु-साध्वी शायद काल करे, उनके शरीर को किसी साधर्मिक साधु देखे तो वो साधु उस मृतक को वस्त्र आदि से ढ़ँककर एकान्त, अचित्त, निर्दोष, स्थंड़िल भूमि देखकर, प्रमार्जना करके परठना कल्पे, यदि वहाँ कोई उपकरण हो तो वो आगार सहित ग्रहण करे, दूसरी बार आज्ञा लेकर वो उपकरण रखना या त्याग करने का कल्पे ।

सूत्र – १८१-१८२

सज्जातर उपाश्रय किराये पे दे या बेच दे लेकिन लेनेवाले को बोले कि इस जगह में कुछ स्थान पर निर्ग्रन्थ साधु बसते हैं । उस के अलावा जो जगह है वो किराये पे या बिक्री में देंगे तो वो सज्जातर के आहार-पानी वहोरना न कल्पे । यदि देनेवाले ने कुछ न कहा हो लेकिन लेनेवाला ऐसा कहे कि इतनी जगह में साधु भले विचरण करे तो लेनेवाले के आहार-पानी न कल्पे, यदि देनेवाला-लेनेवाला दोनों कहे तो दोनों के आहार-पानी न कल्पे ।

सूत्र – १८३

यदि कोई विधवा पिता के घर में रहती हो और उसकी अनुमति लेने का अवसर आए तो उसके पिता, पुत्र या भाई दोनों की आज्ञा लेकर अवग्रह माँगना चाहिए ।

सूत्र – १८४

पंथ के लिए यानि रास्ते में भी अवग्रह की अनुज्ञा लेना । जैसे कि वृक्ष आदि की, वहाँ रहे मुसाफिर की ।

सूत्र – १८५-१८६

राजा मर जाए तब राज में फेरफार हुआ है ऐसा माने । लेकिन पहले राजा की दशा-प्रभाव तूटे न हो, भाई-हिस्सा बँटा न हो, अन्य वंश के राजा का विच्छेद न हुआ हो, दूसरे राजा ने अभी उस देश का राज ग्रहण न किया हो तब तक पूर्व की अनुज्ञा के मुताबिक रहना कल्पे, लेकिन यदि पूर्व के राजा का प्रभाव तूट गया हो, हिस्से का बँटवारा, राज विच्छेद, अन्य से ग्रहण आदि हुए हों तो फिर से नए राजा की आज्ञा लेकर रहना कल्पे । इस प्रकार मैं (तुम्हें) कहता हूँ ।

उद्देशक-७-का मुनि दीपरत्नसागर कृत् हिन्दी अनुवाद पूर्ण

उद्देशक-८

सूत्र – १८७

जिस घर के लिए वर्षावास रहा उस घर में, बाहर के प्रदेश में या दूर के अन्तर में जो शय्या-संथारा मिला हो वो – वो मेरे हैं ऐसा शिष्य कहे लेकिन यदि स्थविर आज्ञा दे तो लेना कल्पे, यदि आज्ञा न दे तो लेना न कल्पे । उसी तरह आज्ञा मिले तो ही रात-दिन वो शय्या-संथारा लेना कल्पे ।

सूत्र – १८८-१८९

वो साधु हल्के श्याय-संथारा की गवेषणा करे, ये–वो एक हाथ से उठाकर एक-दो या तीन दिन के मार्ग में ले जाने के लिए समर्थ हो ऐसा संथारा शर्दी-गर्मी के लिए पाए, उसी तरह वर्षावास के लिए प्राप्त करे ।

सूत्र – १९०

वो साधु कम वजन के शय्या-संथारा की गवेषणा करे, ये–वो एक हाथ से उठाकर एक, दो, तीन, चार, पाँच दिन के दूर के रास्ते के लिए उठाने को समर्थ हो जिससे वो शय्या-संथारा मुझे बढ़ती वर्षाऋतु में काम लगे ।

सूत्र – १९१

जो स्थविर स्थिरवास रहे उसे दंड़ी, पात्रा, सर ढ़ँकने का वस्त्र, पात्रक, लकड़ी, वस्त्र, चर्मखंड़ रखना कल्पे।

यदि स्थविर अकेले हो तब यह सभी उपकरण कहीं रखकर गृहस्थ के घर आहार ग्रहण के लिए नीकले या प्रवेश करे । उसके बाद वापस आने पर जिसके वहाँ उपकरण रखे हों उसकी आज्ञा लेकर वो उपकरण भुगते या त्याग करे ।

सूत्र – १९२-१९४

साधु-साध्वी को पाड़िहारिक-वापस करने के उचित या शय्यातर के पास से शय्या-संथारा पुनः लेकर अनुज्ञा लिए बिना बाहर जाना न कल्पे, आज्ञा लेकर जाना कल्पे ।

सूत्र – १९५-१९७

साधु-साध्वी को पाड़िहारिक या शय्यातर के पास से शय्या-संथारा पहले लिया हो वो उन्हें सौंपकर दूसरी दफा उनकी आज्ञा बिना रखना न कल्पे । आज्ञा लेकर रखना कल्पे, या पहले ग्रहण करके फिर आज्ञा लेना भी न कल्पे, पूर्व आज्ञा लेकर फिर ग्रहण करना कल्पे । यदि ऐसा माने कि यहाँ वाकई में प्रातिहारिक शय्या-संथारा सुलभ नहीं है, तो पहले से ही ग्रहण कर ले फिर अनुमति माँगे तब शायद पाड़िहारिक के साथ शिष्य का झगड़ा हो तो स्थविर उसे रोके और कहे कि तुम कोप मत करो । तुम उनकी वसती ग्रहण करके रहे हो और कठिन वचन भी बोलते हो ऐसे दोनों कार्य करने योग्य नहीं हैं । उस तरह मीष्ट वचन से दोनों को शान्त करे ।

सूत्र – १९८-२००

साधु गृहस्थ के घर आहार के लिए जाए, या बाहर स्थंड़िल या स्वाध्याय भूमि में जाए, या एक गाँव से दूसरे गाँव विचरते हो वहाँ अल्प उपकरण भी गिर जाए । उसे कोई साधर्मिक साधु देखे, गृहस्थ थकी वो चीज ग्रहण करना कल्पे । वो चीजें लेकर वो साधर्मिक आपसी साधु को कहे कि हे आर्य ! यह उपकरण किसका है तुम जानते हो ? साधु कहे कि हा, जानता हूँ, वो उपकरण मेरा है । तो उसे दे । यदि ऐसा कहे कि हम नहीं जानते तो लानेवाले साधु खुद न भुगते, न दूसरे को दे लेकिन एकान्त-निर्दोष-स्थंड़िल भूमि में परठवे ।

सूत्र – २०१

साधु-साध्वी को अधिक पात्र आपस में ग्रहण करना कल्पे । यदि वो पात्र मैं किसी को दूँगा, मैं खुद ही रखूँगा या दूसरे किसी को भी देंगे तो जिनके लिए उन्हें लिया हो उन्हें पूछे या न्यौता दिए बिना आपस में देना न

कल्पे, लेकिन जिनके लिए लिया है उन्हें पूछकर, निमंत्रित करके देना कल्पे ।

सूत्र – २०२

मूर्गे के अंड़े जितने आठ नीवाले यानि कि आठ कवल आहार जो करे उस साधु को अल्प-आहारी बताए । बारह कवल आहारी साधु अपार्ध उणोदरी करते हैं, सोलह कवल आहारी को अर्ध उणोदरी, चौबीस कवल आहारी को पा उणोदरी, ३१ कवल आहारी को किंचित् उणोदरी, ३२ कवल आहारी को प्रमाण प्राप्त आहारी बताए । उस तरह से एक भी कवल आहार कम करनेवाले को प्रकाम भोजी न कहे लेकिन उणोदरी कहे ।

उद्देशक-८-का मुनि दीपरत्नसागर कृत् हिन्दी अनुवाद पूर्ण

उद्देशक-९

सूत्र – २०३-२०६

सागारिक शय्यातर के वहाँ कोई अतिथि घर में भोजन कर रहा हो या बाहर खा रहा हो तो उनके लिए आहार-पानी किए हो वो आहार शय्यातर उसे दे, पाड़िहारिक वापस देने की शर्त से बचा हुआ आहार वो व्यक्ति शय्यातर को दे तो उसमें से साधु को दिया गया आहार साधु को लेना न कल्पे, लेकिन यदि वो आहार अपड़िहारिक हो तो साधु-साध्वी को लेना कल्पे ।

सूत्र – २०७-२१०

सागारिक-शय्यातर के दास, नौकर, चाकर, सेवक आदि किसी भी घर में या घर के बाहर खा रहे हो तो उनके लिए बनाया गया आहार बचे वो नौकर आदि वापस लेने की बुद्धि से शय्यातर को दे तो ऐसा आहार शय्यातर दे तब साधु-साध्वी का लेना न कल्पे, वापस लेने की बुद्धि रहित यानि अप्रतिहारिक हो तो कल्पे ।

सूत्र – २११-२१४

शय्यातर के ज्ञातीजन हो, एक ही घर में, या घर के बाहर, एक ही या अलग चूल्हे का पानी आदि ले रहे हो लेकिन उसके सहारे जिन्दा हो तो उनका दिया गया आहार साधु को लेना न कल्पे ।

सूत्र – २१५-२१८

शय्यातर के ज्ञातीजन हो, एक दरवाजा हो, आने-जाने का एक ही मार्ग हो, घर अलग हो लेकिन घर में या घर के बाहर रसोई का मार्ग एक ही हो । अलग-अलग चूल्हे हो, या एक ही हो तो भी शय्यातर के आहार-पानी पर जिसकी रोजी चलती हो, उस आहार में से साधु को दे तो वो आहार लेना न कल्पे ।

सूत्र – २१९-२३२

शय्यातर की १. तेल बेचने की, २. गुड़ की, ३. किराने की, ४. कपड़े की, ५. सूत की, ६. रुई और कपास की, ७. गंधीयाणा की, ८. मीठाई की दुकान है उसमें शय्यातर का हिस्सा है । उस दुकान पर बिक्री होती है तो उसमें से कोई भी चीज दे तो वो साधु को लेना न कल्पे, लेकिन यदि इस दुका में शय्यातर का हिस्सा न हो, उस दुकान पर बिक्री होती हो उसमें से किसी साधु को दे तो लेना कल्पे ।

सूत्र – २३३-२३६

दूसरों की अन्न-आदि रसोई में शय्यातर का हिस्सा हो, वखार में पड़े आम में उसका हिस्सा हो तो उसमें से दिया गया आहार आदि साधु को न कल्पे, यदि शय्यातर का हिस्सा न हो तो कल्पे ।

सूत्र – २३७

सात दिन की सात पड़िमा समान तपश्चर्या के ४९ रात-दिन होते हैं ।

पहले सात दिन अन्न-पानी की एक दत्ति – दूसरे सात दिन दो-दो दत्ति – यावत् सातवें सात दिन सात-सात दत्ति गिनते कुल १९६ दत्ति होती है वो तप जिस तरह से सूत्र में बताया है, जैसा मार्ग है, जैसा सत्य अनुष्ठान है, ऐसा सम्यक् तरह से काया से छूने के द्वारा निरतिचार, पार पहुँचे हुए, कीर्तन कीए गए उस तरह से साधु आज्ञा को पालनेवाले होते हैं ।

सूत्र – २३८-२४०

(ऊपर कहने के अनुसार) आठ दिन की आठ पड़िमा समान तप कहा है ।

पहले आठ दिन अन्न-पानी की एक-एक दत्ति, उस तरह से आठवी पड़िमा – आठ दिन की आठ दत्ति गिनते कुल ६४ रात-दिन २८८ दत्ति से तप पूर्ण हो, उसी तरह नौ दिन की नौ पड़िमा ८१ रात-दिन और कुल दत्ति ४०५ दश दिन की दश पड़िमा १०० दत्ति और कुल दत्ति ५५० होती है ।

उसी तरह आठवीं, नौ, दश प्रतिमा का सूत्र, कल्प, मार्ग, यथातथ्यपन से सम्यक् तरह से काया द्वारा स्पर्श-पालन, शुद्धि-तरण, कीर्तन-आज्ञा से अनुपालन होता है ।

सूत्र – २४१

दो प्रतिमा बताई है वो इस प्रकार है – छोटी पिशाब प्रतिमा और बड़ी पिशाब प्रतिमा ।

सूत्र – २४२

छोटी पेशाब प्रतिमा वहनेवाले साधु को पहले शरद काल में (मागसर मास में) और अन्तिम उष्ण काल में (आषाढ़ मास में) गाँव के बाहर यावत् सन्निवेश, वन, वनदूर्ग, पर्वत, पर्वतदूर्ग में यह प्रतिमा धारण करना कल्पे, भोजन करके प्रतिमा ग्रहण करे तो १४ भक्त से पूरी हो यानि छ उपवास के बाद पारणा करे, खाए बिना पड़िमा कने से १६ भक्त से यानि सात उपवास से पूरी हो । यह प्रतिमा वहने से दिन में जितनी पिशाब आए वो दिन में पी जाए । रात में आए तो न पीए । यानि यदि वो पिशाब जीव वीर्य-चीकनाई रज सहित हो तो परठवे और रहित हो तो पीए । उसी तरह जो-जो पिशाब थोड़े या ज्यादा नाप में आए वो पीए । यह छोटी पिशाब प्रतिमा बताई जो सूत्र में कहने के मुताबिक, यावत् पालन करते हुए साधु विचरे ।

सूत्र – २४३

बड़ी पिशाब प्रतिमा (अभिग्रह) अपनानेवाले साधु को ऊपर बताए अनुसार विधि से प्रतिमा वहन करनी हो। फर्क इतना कि भोजन करके प्रतिमा वहे तो, ७-उपवास और भोजन किए बिना ८-उपवास, बाकी सभी विधि छोटी प्रतिमा अनुसार मानना ।

सूत्र – २४४

अन्न-पानी की दत्ति की अमुक संख्या लेनेवाले साधु को पात्र धारक गृहस्थ के घर आहार के लिए प्रवेश बाद यात्रा में वो गृहस्थ अन्न की जितनी दत्ति दे उतनी दत्ति कहलाए । अन्न-पानी देते हुए धारा न तूटे वो एक दत्ति, उस साधु को किसी दातार वाँस की छाब में, वस्त्र से, चालणी से, पात्र उठाकर साधु को ऊपर से दे तब धारा तूटे नहीं तब तक सबको एक दत्ति कहते हैं । यदि कईं रखनेवाले हो तो सभी अपना आहार ईकट्ठा कर दे तब हाथ ऊपर करके रखे तब तक सब को मिलकर एक ही दत्ति होती है ।

सूत्र – २४५

जिस साधु ने पानी की दत्ति का अभिग्रह किया है वो गृहस्थ के वहाँ पानी लेने जाए तब एक पात्र ऊपर से पानी देने के लिए उठाया है उन सबको धारा न तूटे तब तक एक दत्ति कहते हैं । (आदि सर्व हकीकत ऊपर के सूत्र २४४ की आहार की दत्ति मुताबिक जानना ।)

सूत्र – २४६-२४७

अभिग्रह तीन प्रकार के बताए, सफेद अन्न लेना, काष्ठ पात्र में सामने से लाकर दे वो हाथ से या बरतन से दे तो जो कोई ग्रहे, जो कोई दे, यदि कोई चीज को मुख में रखे वो चीज ही लेनी चाहिए । वो दूसरे प्रकार से तीन अभिग्रह ।

सूत्र – २४८

दो प्रकार से (भी) अभिग्रह बताए हैं । (१) जो हाथ में ले वो चीज लेना (२) जो मुख में रखे वो चीज लेना – ईस प्रकार मैं (तुम्हें) कहता हूँ ।

उद्देशक-९-का मुनि दीपरत्नसागर कृत् हिन्दी अनुवाद पूर्ण

उद्देशक-१०

सूत्र – २४९

दो प्रतिमा (अभिग्रह) बताए हैं । वो इस प्रकार–जव मध्य चन्द्र प्रतिमा और वज्र मध्य चन्द्र प्रतिमा ।

जव मध्य चन्द्र प्रतिमाधारी साधु एक महिने तक काया की ममता का त्याग करते हैं । जो कोई देव या तिर्यंच सम्बन्धी अनुकूलया प्रतिकूल उपसर्ग उत्पन्न हो जिसमें वंदन-नमस्कार, सत्कार-सन्मान, कल्याण-मंगल, देवसर्दश आदि अनुकूल और दूसरा कोई दंड़, अस्थि, जोतर या नेतर के चलने से काया से उपसर्ग करे वो प्रतिकूल। वो सर्व उपसर्ग उत्पन्न हो उस समभाव से, खमें, तितिक्षा करे, दीनता रहित खमे ।

जव मध्य चन्द्र प्रतिमाधारी साधु को शुक्ल पक्ष की एकम को एक दत्ति अन्न – एक दत्ति पानी लेना कल्पे। सभी दो पगे, चोपगे जो कोई आहार की ईच्छावाले हैं उन्हें आहार मिल गया हो, कईं तापस, ब्राह्मन, अतिथि, कृपण, दरिद्री, याचक, भिक्षा ले जाने के बाद निर्दोष आहार ग्रहण करे । उस साधु को जहाँ अकेले खानेवाला हो वहाँ से आहार लेना कल्पे, लेकिन दो, तीन, चार, पाँच के जमण में से लेना न कल्पे । तीन मास से ज्यादा गर्भवाली के हाथ से, बच्चे के हिस्से में से या बच्चा अलग करे तो न ले । बच्चे को दूध पिलाती स्त्री के हाथ से न ले। घर में दहलीज के भीतर या बाहर दोनों पाँव रखकर दे तो न ले लेकिन एक पाँव दहलीज के भीतर और एक बाहर हो और दे तो लेना कल्पे । उस तरह से न दे तो लेना न कल्पे ।

शुक्ल पक्ष की बीज को यानि दूसरे दिन अन्न की और पानी की दो दत्ति, त्रीज को तीन दत्ति उस तरह से पूनम को यानि पंद्रहवे दिन अन्न-पानी की पंद्रह दत्ति ग्रहण करे । फिर कृष्ण पक्ष में एकम को चौदह दत्ति अन्न की, चौदह दत्ति पानी की, बीज को तेरह दत्ति अन्न, तेरह दत्ति पानी की यावत् चौदश को एक दत्ति अन्न की और एक दत्ति पानी की लेना कल्पे । अमावास को साधु आहार न करे । उस प्रकार निश्चय से यह जव मध्य प्रतिमा बताई, वो सूत्र-कल्प-मार्ग में बताए अनुसार यथातथ्य सम्यक् तरह से काया थकी छूकर, पालन करके, शोधनकर, पार करके, कीर्तन करके, आज्ञानुसार पालन करना ।

सूत्र – २५०

व्रज मध्य प्रतिमा (यानि अभिग्रह विशेष) धारण करनेवाले को काया की ममता का त्याग, उपसर्ग सहना आदि सब ऊपर के सूत्र २४९ में कहने के मुताबिक जानना । विशेष यह की प्रतिमा का आरम्भ कृष्ण पक्ष से होता है । एकम को पंद्रह दत्ति अन्न की और पंद्रह दत्ति पानी की लेकर तप का आरम्भ हो यावत् अमावास तक एक-एक दत्ति कम होने से अमावास को केवल एक दत्ति अन्न और एक दत्ति पानी की ले । फिर शुक्ल पक्ष में क्रमशः एक-एक दत्ति अन्न और पानी की बढ़ती जाए । शुक्ल एकम की दो दत्ति अन्न और पानी की लेना कल्पे, यावत् चौदस को पंद्रह दत्ति अन्न और पानी की ले और पूनम को उपवास करे ।

सूत्र – २५१

व्यवहार पाँच तरह से बताए हैं । वो इस प्रकार आगम, श्रुत् आज्ञा, धारणा और जीत, जहाँ आगम व्यवहारी यानि कि केवली या पूर्वधर हो वहाँ आगम व्यवहार स्थापित करना । जहाँ आगम व्यवहारी न हो वहाँ सूत्र (आयारो आदि) व्यवहा स्थापित करना, जहाँ सूत्र ज्ञाता भी न हो वहाँ आज्ञा व्यवहार स्थापना, जहाँ आज्ञा व्यवहारी न हो वहाँ धारणा व्यवहार स्थापित करना और धारणा व्यवहारी भी न हो वहाँ जीत यानि कि परम्परा से आनेवाला व्यवहार स्थापित करना ।

इस पाँच व्यवहार से करके व्यवहार स्थापित करे तो इस प्रकार–आगम, सूत्र, आज्ञा, धारणा, जीत वैसे उस व्यवहार संस्थापित करे, हे भगवंत ! ऐसा क्यों कहा ? आगम बलयुक्त साधु को वो पूर्वोक्त पाँच व्यवहार को जिस वक्त जो जहाँ उचित हो वो वहाँ निश्रा रहित उपदेश और व्यवहार रखनेवाले साधु आज्ञा के आराधक होता है।

सूत्र – २५२-२५९

चार तरह के पुरुष हैं वो कहते हैं । (१) उपकार करे लेकिन मान न करे, मान करे लेकिन उपकार न करे, दोनों करे, दोनों में से एक भी न करे, (२) समुदाय का काम करे लेकिन मान न करे, मान करे लेकिन समुदाय का काम न करे, दोनों करे, दोनों में से एक भी न करे, (३) समुदाय के लिए संग्रह करे लेकिन मान न करे, मान करे लेकिन समुदाय के लिए संग्रह न करे, दोनों करे, दोनों में से एक भी न करे, (४) गण को शोभायमान करे लेकिन मान न करे, मान करे लेकिन गण की शोभा न करे, दोनों करे, दोनों में से एक भी न करे,

(५) गण शुद्धि करे लेकिन मान न करे, मान करे लेकिन गण की शुद्धि न करे, दोनों करे, दोनो में से एक भी न करे, (६) रूप का त्याग करे लेकिन धर्म त्याग न करे, धर्म छोड़ दे लेकिन रूप न छोड़े, दोनों छोड़ दे, दोनों में से कुछ भी न छोड़े, (५) प्रियधर्मी हो लेकिन दृढ़धर्मी न हो, दृढ़धर्मी हो लेकिन प्रियधर्मी न हो, दोनों हो, दोनों में से एक भी न हो ।

सूत्र – २६०-२६१

चार तरह के आचार्य बताए – (१) प्रव्रज्या आचार्य लेकिन उपस्थापना आचार्य नहीं, उपस्थापना आचार्य मगर प्रव्रज्या आचार्य नहीं, दोनों हो, दोनों में से एक भी न हो, (२) उद्देशाचार्य हो लेकिन वंदनाचार्य न हो, वंदनाचार्य हो लेकिन उद्देशाचार्य न हो, दोनों हो, दोनों में से एक भी न हो ।

सूत्र – २६२-२६३

चार अन्तेवासी शिष्य बताए हैं – (१) प्रव्रज्या शिष्य हो लेकिन उपस्थापना शिष्य न हो, उपस्थापना शिष्य हो लेकिन प्रव्रज्या शिष्य न हो, दोनों हो, दोनों में से एक भी न हो, (२) उद्देशा करवाए लेकिन वांचना न दे, वांचना दे लेकिन उद्देशा न करवाए, दोनों करवाए, दोनों में से कुछ भी न करवाए ।

सूत्र – २६४

तीन स्थविर भूमि बताई है । वय स्थविर, श्रुत स्थविर और पर्याय स्थविर । ६० सालवाले वय स्थविर, ठाण-समवाय के धारक वो श्रुतस्थविर, बीस साल का पर्याय यानि पर्याय स्थविर ।

सूत्र – २६५

तीन शिष्य की भूमि कही है । जघन्य को सात रात्रि की, मध्यम वो चार मास की और उत्कृष्ट छ मास की

सूत्र – २६६-२६७

साधु-साध्वी को लघु साधु या साध्वी जिनको आठ साल से कुछ कम उम्र है उसकी उपस्थापना या सह-भोजन करना न कल्पे, आठ साल से कुछ ज्यादा हो तो कल्पे ।

सूत्र – २६८-२६९

साधु-साध्वी को बाल साधु या बाल साध्वी जिन्हें अभी बगल में बाल भी नहीं आए यानि वैसी छोटी वयवाले को आचार प्रकल्प नामक अध्ययन पढ़ाना न कल्पे, बगल में बाल उगे उतनी वय के होने के बाद कल्पे ।

सूत्र – २७०-२८८

जिस साधु का दीक्षा पर्याय तीन साल का हुआ हो उसे आचार प्रकल्प अध्ययन पढ़ाना कल्पे, उसी तरह चार साल के पर्याय से, सूयगड़ो, पाँच साल पर्याय से दसा, कप्प, ववहार, आठ साल पर्याय से ठाण, समवाय, दश साल पर्याय से विवाह पन्नत्ति यानि भगवई, ११ साल पर्याय से खुड्डियाविमाणपविभत्ति, महल्लियाविमाणपविभत्ति, अंगचूलिया, वग्गचूलिया, विवाहचूलिया, बारह साल पर्याय से उठ्ठाणसूय, समुठ्ठाणसूय, देविंदोववाय, नागपरिया-वणिय, चौदह साल पर्याय से आसिविसभावना, अठ्ठारह साल पर्याय से दिठ्ठीविसभावना, १९ साल पर्याय से दिठ्ठिवाय, उस तरह से बीस साल के पर्यायवाले साधु को सर्वे सूत्र का अध्ययन उद्देशो आदि करवाना कल्पे ।

सूत्र – २८९

वैयावच्च दश तरह से बताई है । वो इस प्रकार – आचार्य की, उपाध्याय की, स्थविर की, शिष्य की, ग्लान की, तपस्वी की, साधर्मिक की, कुल की, गण की, साधु संघ की । (यह आचार्य, उपाध्याय यावत् संघ की वैयावच्च करनेवाले साधु महा निर्जरा-महालाभ पाते हैं ।)

उद्देशक-१०-का मुनि दीपरत्नसागर कृत् हिन्दी अनुवाद पूर्ण

(३६) व्यवहार-छेदसूत्र-३ का
मुनि दीपरत्नसागर कृत् हिन्दी अनुवाद पूर्ण

नमो नमो निम्मलदंसणस्स

પૂજ્યપાદ્ શ્રી આનંદ–ક્ષમા–લલિત–સુશીલ–સુધર્મસાગર ગુરૂભ્યો નમઃ

३६

व्यवहार

आगमसूत्र हिन्दी अनुवाद

[अनुवादक एवं संपादक]

आगम दीवाकर मुनि दीपरत्नसागरजी

[M.Com. M.Ed. Ph.D. श्रुत महर्षि]

વેબ સાઇટ:– (1) www.jainelibrary.org (2) deepratnasagar.in

ઇમેલ એડ્રેસ:- jainmunideepratnasagar@gmail.com મોબાઇલ 09825967397